भोपाल से कोई 60 किलोमीटर दूर रातापानी एक वन्यप्राणी अभयारण्य है। इसके आसपास कई गाँव हैं। कुछ खेतों में तार की बाड़ लगी है। अक्टूबर 2009 की बात है। अपनी माँ के साथ एक दस महीने का भालू का बच्चा इसी इलाके में घूम रहा था। खेलते-खेलते वह ऐसी ही एक बाड़ में उलझ गया। शायद वह उसके नीचे से निकलने की कोशिश कर रहा होगा। कँटीले तारों से बच निकलने की उसने लाख कोशिशें कीं। पर, वह जितनी कोशिश करता उतना ही और उलझता जा रहा था। उसकी माँ काफी चीखी-चिल्लाई। उसने भी अपने बच्चे को छुड़ाने की कोशिशें कीं।

जब भालू का नटखट बच्चा काँटेदार तारों में फँसा

आर के दीक्षित

फिर उन पर किसी गाँव वाले की नज़र पड़ी। गाँववालों ने रातापानी के वन कर्मचारियों को खबर दी। खबर मुझ तक भी पहुँची। मैं किसी काम से विदिशा जा रहा था। खबर सुनते ही मैंने लौटने का फैसला कर लिया। मैंने अन्य अधिकारियों को भालू के बच्चे की खबर दी। भोपाल के वन विहार में वन्य जीव बचाव दस्ता है। उसको खबर दी। यह दस्ता आसपास के जंगली जानवरों को मुसीबत में मदद करता है। कभी मैं ही इस दस्ते को देखता था। वन्य प्राणी बचाव दल को साथ लेकर मैं जल्दी ही मौके पर पहुँचा।

हम दूरबीन की मदद से उसे दूर से ही देख रहे थे। क्योंकि किसी के पास आते ही वह चिल्लाने लगता था। और काँटों से निकलने के प्रयास में और फँसने लगता। काँटों से वह जख्मी भी होता जा रहा था। बचाव दल में काजल यादव भी थे। वे भालू विशेषज्ञ हैं। वे ही तो वन विहार में सारे भालुओं को सँभालते हैं। देखरेख करते हैं। हमने निर्णय लिया कि भालू के बच्चे को बेहोश करके ही छुड़ाना बेहतर होगा। वन्यप्राणियों को बेहोश करने की अनुमति उच्चाधिकारियों से लेना अनिवार्य है। यह एक अच्छी बात थी कि जहाँ भालू का बच्चा फँसा था वहाँ मोबाइल का नेटवर्क था। मैंने अपने अपर प्रधान मुख्य वन संरक्षक से भालू के बच्चे को बेहोश करने की इजाज़त ली।

वन्यप्राणियों को दूर-से बेहोशी का इंजेक्शन एक विशेष प्रकार की बन्दूक से लगाते हैं जो हवा के दबाव से इंजेक्शन को दूर फेंक देती है। आम बन्दूकों की तरह। इस बन्दूक को "ट्रैंक्वलाइज़र गन" कहते हैं। पास से बेहोश करने के लिए एक विशेष प्लास्टिक का पाइप इस्तेमाल किया जाता है जिसमें मुँह से फूँक मारकर इंजेक्शन पहुँचाया जाता है। इस पाइप को "ब्लो पाइप" कहते हैं। काजल यादव ने ऐसी ही पाइप में फूँक मारकर भालू के बच्चे को बेहोशी का इंजेक्शन लगाया। कुछ ही देर में वह बेहोश हो गया। हमें

बीस मिनिट में सब काम निपटाना था। क्योंकि वह इतनी ही देर बेहोश रहने वाला था। हम लोग झट-से उसके पास पहुँचे। काँटेदार तार केवल उसकी पीठ के बालों में उलझे थे। यानी उसकी पीठ नुकीली तारों से बच गई थी। हाँ, पर निकलने के संघर्ष में उसके अगले पंजे की हथेली और गले पर काँटेदार तारों की खरोंच के निशान थे। डॉ. यादव ने तुरन्त उसका प्राथमिक उपचार किया। गाँव वालों और हमारे साथियों ने बताया कि रात में उस भालू शावक की माँ आसपास ही थी। और खूब चिल्ला रही थी। कुछ लोगों ने उसे वन विहार ले जाने की सलाह दी। पर, हम सबने चर्चा करके तय किया कि उसे उसी जंगल में छोड़ दिया जाए। अपनी माँ के पास।

हमने उसे अपने वाहन में रखा। और जंगल में कुछ दूर छोड़ने चल पड़े। फिर पिंजरा खोला। पर, वह तो निकल ही नहीं रहा था। पिंजरे को पीछे से खटखटाने पर वह किसी तरह बाहर निकला। और धीरे-धीरे जंगल की ओर चला गया। आगे की ज़िम्मेदारी स्थानीय कर्मचारियों की थी। उन्हें उस क्षेत्र की निगरानी की ताकीद की। गाँववालों को भी उससे दूर रहने की समझाइश देकर हम वापस आ गए।

तीन-चार दिन की निगरानी में भालू का बच्चा अपनी माँ के साथ देखा गया। हम इस बात से खुश हुए कि भालू और उसकी माँ दोनों अब जंगल में सही सलामत हैं। खुश हैं।

सभी फोटो: आर. के. दीक्षित

पेड़ पर अण्डे देती माँ तितली

तितलियाँ तितलियाँ

इतने सुन्दर रंग-डिज़ाइनों और आकारों वाली तितलियों को देख भला कौन अचम्भित नहीं होगा! दुनिया भर में तितलियों की 20000 से भी ज़्यादा प्रजातियाँ हैं। और, इन्हें देखने के लिए तुम्हें बहुत दूर जाने की ज़रूरत नहीं। अपने आसपास के बगीचे में ही तुम्हें तितलियों की 15-20 प्रजातियाँ दिखाई दे जाएँगी।

तितलियाँ कीटों की श्रेणी में आती हैं। सभी कीटों की तरह इनकी भी चार अवस्थाएँ होती हैं – अण्डा, लार्वा, प्यूपा और वयस्क। ज़्यादातर तितलियों के लार्वा पत्तियाँ खाते हैं। पर, ऐसा नहीं कि ये कोई भी पत्ती चट कर जाते हैं। हरेक प्रजाति किन्हीं खास पेड़-पौधों के पत्ते ही खाती है। इसलिए माँ तितली उसी पेड़ पर अण्डे देती है जिसकी पत्तियों को लार्वा खा सके। लार्वा बड़े ही खाऊ होते हैं। अण्डे से निकलते ही वे खाना शुरू कर देते हैं। वो इतना खाते हैं इतना खाते हैं कि अपने जीवन काल में अपने आकार से 10 गुना तक बड़े हो जाते हैं। अपना पूरा आकार पाने के बाद वे पेड़ की किसी मज़बूत टहनी से लटक जाते हैं – रेशम के धागे के सहारे। फिर चालू होता है बुनाई का सफर। वे अपने इर्दगिर्द कोकून बनाने लगते हैं। लार्वा 10-15 दिनों तक प्यूपा ही बना रहता है। जैसे ही कायान्तरण पूरा होने वाला होता है कोकून का रंग बदलने लगता है। कुछ प्रजातियों में यह पूरी तरह से पारदर्शी हो जाता है। एक दिन सुबह-सवेरे उसमें से एक खूबसूरत-सी तितली निकलती है और फुर्र हो जाती है...